अध्याय-14

गुणत्रयविभागयोग-नामक 14वाँ अ0।।

[1-4 ज्ञान की महिमा और प्रकृति-पुरुष से जगत् की उत्पत्ति]

श्रीभगवानुवाचः-परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानं उत्तमं। यत् ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिं इतः गताः।। 14/1

भूयः ज्ञानानां उत्तमं	पुनः {विधर्मी ब्राह्मणों की 7 कुरियों से बने} सब ज्ञानों से परमश्रेष्ठ {पहली ब्राह्मण कुरी का}
परं ज्ञानं प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा सर्वे	परब्रह्म - {परमेश्वरी} ज्ञान बताता हूँ, जिसे जानकर {पूर्वकल्प में भी} सब {मनन चिन्तनशील}
मुनयः इतः परां सिद्धिं गताः	{ऋषि} मुनिजन इस नरक से {जीते जी} परमसिद्धिरूप {विष्णुलोकीय वैकुण्ठधाम} गए थे।

इदं ज्ञानं उपाश्रित्य मम साधर्म्यं आगताः। सर्गे अपि न उपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च।। 14/2

इदं ज्ञानं उपाश्रित्य मम साधर्म्यं	इस ज्ञान का आश्रय लेकर मेरे समान {निर्विकारी निरहंकारी परंब्रह्म के} गुणधर्म को
आगताः सर्गे न उपजायन्ते	प्राप्त हुए {सत-त्रेता के स्वर्ग में जाते हैं, इस दुःखी} संसार में उत्पन्न नहीं होते
च प्रलये अपि न व्यथन्ति•	और प्रलयांत {महाविनाश•} में भी व्यथित नहीं होते, {प्रायः जन्मों में सुखी ही रहते।}

•{खुदा के बन्दे कयामत में भी मौज में रहेंगे। (कुरान)} {'योगक्षेमं वहाम्यहम' देखिए गीता 9-22}

मम योनिः महत् ब्रह्म तस्मिन् गर्भं दधामि अहं। सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत।। 14/3

भारत महद्ब्रह्म	हे {सच्चीगीता एडवांस ज्ञान-प्रकाश में सदारत} भारत! {अपरा प्रकृतिरूप अर्जुन-रथ का गर्भ क्षेत्र} महद्ब्रह्म
मम योनिः अहं तस्मिन्	मेरी योनि {रूपा माता भी} है; मैं उस {कल्पांत कालीन अविनाशी देहरूप जड़त्वमयी लिंगमूर्ति} में
गर्भं दधामि	{आत्म-ज्ञान रूपी अणुवत/ज्योतिबिंदु बीज का} गर्भ डालता हूँ। {सम्पूर्ण+आख्यारूप सांख्य योग वाले}
ततः	उस {एडवांस ज्ञान-गर्भ} से {जगत्पिता का स्वात्म-चिन्तन बढ़ने से परमपिता शिव से योग-ऊर्जा द्वारा पुरुषोत्तम संगमयुग में}

सर्वभूतानां सम्भवः भवति	सब {रुद्राक्ष/बीजरूप/पितर रूप} प्राणियों की {महत् ब्रह्मा द्वारा •मानसी} उत्पत्ति होती है।

•{'अन्नाद्भवन्ति भूतानि' (पाँच मुखों वाले संगठित) ब्रह्मा के प्यार की खुराक से मानसी सृष्टि के प्राणी होते हैं।} (गीता 3-14)

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः। तासां ब्रह्म महत् योनिः अहं बीजप्रदः पिता।। 14/4

कौन्तेय सर्वयोनिषु याः	हे कुन्ती-पुत्र! {देव-दानवादि मानवमात्र की भिन्न-2 धर्मों की} सब योनियों में जो {प्रकृतिकृत}
मूर्तयः सम्भवन्ति तासां	{दैहिक} मूर्तियाँ पैदा होती हैं, उन सबकी {23 अविनाशी तत्वों से निर्मित जड़ात्मक/दैहिक तत्व} ब्रह्म-
योनिः महत् ब्रह्म	योनि {रूपा मातृ-संस्कारों से अर्जुन-रथ ही} विशाल {पृथ्वी-बीज} महतब्रह्म है। {इस रीति पु.संगम में}
अहं बीजप्रदः पिता	मैं {निराकार ज्ञानसूर्य शिव मूल रूप से जगत्पिता द्वारा} ज्ञानबीज-दाता परमपिता हूँ।

[5-18 सत्, रज, तम-तीनों गुणों का विषय]

सत्त्वं रजः तमः इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः। निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनं अव्ययं।। 14/5

महाबाहो सत्त्वं रजः तमः	हे {सहयोगियों रूप} दीर्घबाहु! सत्त्वगुण, रजो {और} तमोगुण, {कालक्रमानुसार ये त्रिगुणात्मक}
इति प्रकृतिसम्भवाः गुणाः	{रहने वाले} ये प्रकृति {रूप भी इसी मूर्तिमंत महादेव के शरीर} से उत्पन्न हुए तीनों गुण,
अव्ययं देहिनं देहे निबध्नन्ति	अविनाशी आत्मा को {तात्त्विक} देह {रूप अविनाशी पिण्ड} में भली-भाँति बाँधते हैं।

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात् प्रकाशकं अनामयं। सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन च अनघ।। 14/6

अनघ	हे निष्पाप! {धवल/श्वेत अर्जुन! भले सारी दुनियाँ कलंक लगाती है या ग्लानि करने में भी चूकती नहीं! }
तत्र निर्मलत्वात्	{फिर भी} वहाँ {पुरुषोत्तम स्वर्णिम संगम में सत्य की प्रत्यक्षता होने पर अपने गुणों से} निर्मल होने से
प्रकाशकं च अनामयं सत्त्वं	ज्ञान-प्रकाशक व रोगरहित सत्वगुण {साकारी सो निराकारी बने परमात्मा} को

ज्ञानसंगेन सुखसंगेन बध्नाति	ज्ञान की आसक्ति द्वारा {सम्पूर्ण सत्वस्थ बने आदिदेव को सर्वोत्तम} सुखासक्ति से बाँधता है।

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवं। तत् निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनं।। 14/7

कौन्तेय रागात्मकं रजः	हे कौन्तेय! अनुराग {के दिखावा} रूप रजोगुण को {नरनिर्मित द्वैतवादी दैत्यों के नरक में}
तृष्णासंगसमुद्भवं विद्धि तत्	लोभ {और} आसक्ति से उत्पन्न हुआ जान। वह {रजोगुण कर्मघमंडी अतिभोगी}
देहिनं कर्मसंगेन निबध्नाति	आत्मा को {हिंसक कर्म इन्द्रियों के} कर्मों से {उत्तरोत्तर} लगाव बढ़ने से अच्छी तरह बाँधता है।

तमः तु अज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनां। प्रमादालस्यनिद्राभिः तत् निबध्नाति भारत।। 14/8

भारत सर्वदेहिनां मोहनं	हे भरत/विष्णु के वंशी! सब देहधारियों को मूढ़ बनाने वाले {पापमय नारकीय कलियुग के}
तमस्त्वज्ञानजं विद्धि	तमोगुण को तो {कलियुगारम्भकर्ता शंकराचार्यकृत सर्वव्यापी के} अज्ञान से पैदा हुआ जान।
तत् प्रमादालस्य-	वह {तमोगुण अविनाशी ड्रामानुसार राक्षसी कलियुग में दीर्घसूत्री भाव से} लापरवाही, आलस्य
निद्राभिः निबध्नाति	{और} निद्रा द्वारा {अतिभोगी बनी आत्मा को} निःशेष रूप से {रौरव नरक में} बाँध लेता है।

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत। ज्ञानं आवृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयति उत।। 14/9

भारत सत्त्वं सुखे रजः कर्मणि	हे भरतवंशी {स्वर्गीय} सत्वगुण सुख में, {द्वापुर से} रजोगुण {भ्रष्ट कर्मेन्द्रियों के} कर्म में
संजयति तु तमः ज्ञानं	{देहाकर्षण द्वारा} लगाता है; किंतु तमोगुण {पृथ्वीराज जैसे कलियुगी राजाओं के} ज्ञान को {भी}
आवृत्य प्रमादे उत संजयति	{तीव्रता से भली-भाँति} ढककर {सदाकालीन कामुकता की आग से} गफलत में भी डाल देता है।

रजः तमश्च अभिभूय सत्त्वं भवति भारत। रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजः तथा।। 14/10

भारत रजः च तमः	हे भारत! {सतयुग-त्रेता के स्वर्ग में सात्विक ज्ञानेन्द्रियों का सुख} रजो और तमोगुण को

अभिभूय सत्त्वं भवति	दबाकर सत्वगुण पैदा करता है। {द्वापर से द्वैतवादी धर्मपिताओं की भ्रष्ट कर्मेन्द्रिय का सुख}
सत्त्वं च तमः रजः तथा	सत्व और तमोगुण को {दबाकर} रजोगुण तथा {पापी कलियुग में तो कामाग्नि की तीव्रता से}
सत्त्वं रजः तमः एव	सत्व और रजो को {दबाकर उत्तेजित मन सर्वेन्द्रियों की क्षीणता के क्षणिक सुख से} तमोगुण ही {बढ़ाता है}।

सर्वद्वारेषु देहे अस्मिन् प्रकाशः उपजायते। ज्ञानं यदा तदा विद्यात् विवृद्धं सत्त्वं इति उत।। 14/11

यदा अस्मिन् देहे सर्वद्वारेषु	जब इस {गंद छोड़ने वाली} देह के सभी {इन्द्रिय-} द्वारों में {एकमात्र सच्चीगीता का एडवांस}
ज्ञानं प्रकाशः उपजायते तदा उत	ज्ञानप्रकाश {मंथन द्वारा} उत्पन्न होता है, तब अवश्य ही {पुरुषोत्तम संगमयुगी शूटिंग में}
सत्त्वं विवृद्धं इति विद्यात्	{ब्रह्मावत्सों की सतयुगी नई दुनियाँ-अर्थ} सत्वगुण विशेष बढ़ा है, ऐसा {निश्चित} जान ले।

लोभः प्रवृत्तिः आरम्भः कर्मणां अशमः स्पृहा। रजसि एतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ।। 14/12

भरतर्षभ रजसि	हे भरतवंश में श्रेष्ठ {हीरो!सतयुग-त्रेता के स्वर्ग में 2500 वर्षीय ज्ञानेन्द्रिय सुखों में धीरे से गिरते-2} रजोगुण के
विवृद्धे कर्मणां लोभः प्रवृत्तिः	विशेष बढ़ने पर {द्वापर-मध्यांत से मुस्लिम दैत्यों के} कर्मों में लोभ की प्रवृत्ति का
आरम्भः स्पृहा अशमः एतानि जायन्ते	आरंभ, लालसा, अशांति- ये सब {भ्रष्टेन्द्रियाचरण की तीव्रता से ही} पैदा होते हैं।

अप्रकाशः अप्रवृत्तिश्च प्रमादः मोह एव च। तमसि एतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन।। 14/13

कुरुनन्दन	हे {ऐसे कर्मेन्द्रिय-अभिमानी राजा कुरु के वंशज} कुरुओं के {भी} आह्लाददाता {प्रह्लाद}!
तमसि विवृद्धे प्रमादः	{कलियुग में} तमोगुण विशेष बढ़ने पर {श्रेष्ठ कर्मों में ही} लापरवाही {से जीवनमार्ग में घना}
अप्रकाशः च अप्रवृत्तिश्च	अज्ञानान्धकार तथा {कल्याण-कृत्यों में} अरुचि और {स्वदेह, संबन्धियों और पदार्थों में विशेष}
मोहः एतान्येव जायन्ते	{दैहिक अथवा मानसिक} लगाव- ये सब {अवगुण तामसी-पापी कलियुग में} ही उत्पन्न होते हैं।

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्। तदा उत्तमविदां लोकान् अमलान् प्रतिपद्यते।। 14/14

यदा देहभृत् सत्त्वे प्रवृद्धे	{कल्पांत में} जब देहधारी {ब्रह्मावत्स योग द्वारा ब्राह्मणत्व का} सत्वगुण अति बढ़ने पर
प्रलयं याति तदा तु उत्तम-	{महाविनाश की} प्रलयकालीन महामृत्यु पाता है, तब तो {वह पुरुषोत्तम संगम से ही} पुरुषोत्तम को
विदाममलान् लोकान्प्रतिपद्यते	जानने वालों के निर्मल {स्वर्गीय} लोकों की {देवताई पीढ़ियों में जन्म} पाता है।

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते। तथा प्रलीनः तमसि मूढयोनिषु जायते।। 14/15

रजसि प्रलयं गत्वा	रजोगुणी स्थिति में प्रलयकालीन महामृत्यु को पाकर, {भ्रष्टकर्मेन्द्रियों की हिंसा से भरपूर द्वैतवादी}
कर्मसंगिषु जायते	{द्वापुरयुगी दैत्य} कर्मों से लगाव वालों में {संगमयुगी शूटिंग के स्वभाव से ही} उत्पन्न होता है,
तथा तमसि प्रलीनः	उसी प्रकार {संगमयुगी शूटिंगकाल में} तमोगुणी {स्वभाव वाले लोगों के बीच} में महामृत्यु प्राप्त हुआ
मूढयोनिषु जायते	{कल्प-2 की हूबहू शूटिंग अनुसार कलहयुगी} मूढ़मति के {व्यभिचारी} राक्षसों में पैदा होता है।

कर्मणः सुकृतस्य आहुः सात्त्विकं निर्मलं फलं। रजसः तु फलं दुःखं अज्ञानं तमसः फलं।। 14/16

सुकृतस्य कर्मणः सात्त्विकं	{रुद्रज्ञान-यज्ञ के श्रेष्ठ सेवाकर्मों के संगमयुगी पुण्यों के फलस्वरूप} अच्छे कर्मों का सात्त्विक
निर्मलं फलमाहुःतु	निर्मल फल {सतयुग का स्वर्गीय सत्त्वप्रधान या सत्व सामान्य त्रेता} कहा जाता है; किंतु
रजसः फलं दुःखं	{द्वापर के द्वैतवादी धर्मावलम्बियों में हिंसक शासन से पैदा} राजसी {कर्मों का} फल दुःख है।
तमसः फलं अज्ञानं	तामसी {& पापी कलियुग के व्यभिचारी कर्मों} का फल {मूढ़भाव वाला घोर} अज्ञान {अन्धकार} है।

सत्त्वात् सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च। प्रमादमोहौ तमसो भवतः अज्ञानं एव च।। 14/17

सत्त्वाज्ज्ञानञ्च रजसः लोभ	सत्व से {परखने-निर्णय की} समझशक्ति और रजोगुण से लोभ {लालसा & लोलुपता}
एव संजायते तमसो अज्ञानं	ही उत्पन्न होती है। {कलियुगी व्यभिचार से पैदा} तमोगुण से {भरीपूरी बुद्धि में} बेसमझी
च प्रमादमोहौ एव भवतः	और लापरवाही तथा {'क्रोधाद्भवति सम्मोहः' रूप (गीता 2/63)} मूढ़ता ही उत्पन्न होती है।

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः। जघन्य गुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः।। 14/18

सत्त्वस्थाः ऊर्ध्वं	{पृथ्वी पर कल्पांत में} सत्वगुण में स्थित {लोग सत-त्रेता के स्वर्गलोक में} ऊपर {ऊँची स्थिति में}
गच्छन्ति राजसाः मध्ये तिष्ठन्ति	जाते हैं, रजोगुणी मध्य {द्वापुरयुग में नर-निर्मित नरकलोक} में स्थित होते हैं।
जघन्य गुणवृत्तिस्थाः	{और} जघन्य {पापियों की हिंसावादी} गुण-वृत्तियों में स्थित {राक्षसी वृत्ति के पशु तुल्य}
तामसाः अधः गच्छन्ति	{जर्जरीभूत} तामसी लोग {कलियुगी} अधोगति को {रौरव नरक की असहनीय यातनाओं में} जाते हैं।

[19-27 भगवत्प्राप्ति का उपाय और गुणातीत पुरुष के लक्षण]

न अन्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टा अनुपश्यति। गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सः अधिगच्छति।। 14/19

यदा द्रष्टा गुणेभ्यः अन्यं	जब देखने वाला {सत्-रजादि प्रकृतिगत} गुणों के अलावा किसी अन्य {श्रेष्ठ या क्षुद्र प्राणी} को
कर्तारं नानुपश्यति च	{भला या बुरा} करने वाला नहीं देखता और {युगानुकूल क्रमशः परिवर्तनशील, जड़त्वमयी प्रकृतिगत}
गुणेभ्यः परं वेत्ति सः	गुण संघात से परे {सृष्टि रंगमंच के शिव समान बने हीरो} परम+आत्मा को जानता है, {तब} वह
मद्भावं अधिगच्छति	मेरे {सदा सत्वस्थ शिवज्योति} भाव को {मात्र स्वर्णिम पुरुषोत्तम संगमयुग में नं. वार ही} पाता है।

गुणान् एतान् अतीत्य त्रीन् देही देहसमुद्भवान्। जन्ममृत्युजरादुःखैः विमुक्तः अमृतं अश्नुते।। 14/20

देही देहसमुद्भवान् एतान् त्रीन्	{पु.संगम में स्टारवत् बिंदु} आत्मा देह से पैदा होने वाले इन तीनों {क्रमिक सत्वादि}
गुणानतीत्य जन्ममृत्युजरादुःखैः	गुणों को {विपरीति गति से} पार करके जन्म-मृत्यु-बुढ़ापा आदि {ढ़ेर सारे} दुःखों से
विमुक्तः अमृतं अश्नुते	अच्छी तरह मुक्त हुआ {देवों की कलातीत 1+कलाबद्ध 20 पीढ़ियों में} अमर पद को भोगता है।

अर्जुन उवाचः-कैः लिङ्गैः त्रीन् गुणान् एतान् अतीतः भवति प्रभो। किमाचारः कथं च एतान् त्रीन् गुणान् अतिवर्तते।। 14/21

प्रभो कैर्लिंगैरेतान्त्रीन्गुणान्	हे प्रभो! किन लक्षणों से {युक्त हुआ पुरुष जड़त्वमयी दैहिक प्रकृति के} इन 3 गुणों से
अतीतः भवति आचारः किं च	पार हो जाता है? {पुरुषोत्तम संगमयुग में उसका} आचरण कैसा होता है और {प्रकृतिगत}
एतान्त्रीन्गुणान् कथमतिवर्तते	इन तीनों गुणों को {1 साथ, इसी संसार में रहते} कैसे {पुरुषार्थ से} पार करता है?

श्रीभगवानुवाचः-प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहं एव च पाण्डव। न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति।। 14/22

पाण्डव प्रकाशं च	हे पाण्डु/पण्डा {रूप तीर्थनेता शिव} के पुत्र {अर्जुन}! {सत्वगुणी विवस्वत के सूर्यवंशी आत्म-} प्रकाश और
प्रवृत्तिं च मोहं	{द्वैतवादी द्वापर से विधर्मियों के रजो की कर्मों में} प्रवृत्ति और {कलियुगी तामस से} मूढ़ता
सम्प्रवृत्तानि एव न द्वेष्टि च	पैदा होने पर भी {जो ऐसों से} न द्वेष करता है और {पुरुषोत्तम संगमयुग की शूटिंग में भी कभी}
न निवृत्तानि कांक्षति	ना {इनके संग से} निवृत्त होने पर आकांक्षा करता है {इस तरह 'साक्षी दृष्टा निर्गुणो केवलः' बना}

उदासीनवत् आसीनः गुणैः यः न विचाल्यते। गुणा वर्तन्त इति एव यः अवतिष्ठति न इङ्गते।। 14/23

उदासीनवदासीनः यः	उदासीन की भाँति रहते हुए जो {प्रकृतिगत मर्ज या इमर्ज हुए मायानिर्मित इन रज-तम}
गुणैर्विचाल्यते न गुणैव	गुणों से हिलता नहीं {और मायावी सत्त्व-रजादि क्रमशः 3} गुण ही {सदा चतुर्युगी में}
वर्तन्त इति यः	{भी} आवर्तन करते हैं ← ऐसे {समझकर} जो {कैसी भी परिस्थितिवश अपने पुरुषार्थ में}
इंगते न अवतिष्ठति	{कभी भी} डोलता नहीं; {भली-भाँति हिमवान् युधिष्ठिर-जैसा सात्विक बुद्धि से} स्थिर रहता है

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः। तुल्यप्रियाप्रियो धीरः तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः।। 14/24

समदुःखसुखः स्वस्थः	{जो नारकीय संसार के} सुख-दुःख में {ज्योतिबिंदु आत्मा में सदाशिव समान} आत्मस्थ है,
समलोष्टाश्मकांचनः तुल्यप्रियाप्रियः	मिट्टी-पत्थर-सोने {जैसे कोई} में भी समदृष्टि है, प्रिय-अप्रिय में {रागद्वेषहीन1} समान,
धीरः तुल्यनिंदात्मसंस्तुतिः	{आगमापाई सुखदुख में} धैर्यवान है। अपनी निंदा-स्तुति में एक समान रहता है,

मानापमानयोः तुल्यः तुल्यः मित्रारिपक्षयोः। सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते।। 14/25

मानापमानयोस्तुल्यःमित्रारिपक्षयोः	{जो} मान-अपमान में समान है, {परिवर्तनीय} मित्र-शत्रु दोनों पक्षों में {सदा}
तुल्यः सर्वारम्भपरित्यागी	समान है। {यज्ञ सिवा} सभी {सांसारिक बन्धनों वाले} कर्मों का समुचित त्यागी है।
स गुणातीतः उच्यते	वह गुणसंघात से परे {वैकुण्ठ वासी विष्णु समान} कहा जाता है। {गीता 2-45 & 3-9}

मां च यः अव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते। स गुणान् समतीत्य एतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते।। 14/26

च यः मामव्यभिचारेण भक्ति-	और जो मुझ {रुद्र ज्ञान यज्ञपिता शिवबाबा} की {'मामेकम्' वाली} अव्यभिचारी भावना से
योगेन सेवते सैतान्गुणान्	{सदा ही} योगयुक्त सेवा करता है, वह {प्रकृति के} इन {दुस्तर} गुणों को {श्रीमत से}
समतीत्य ब्रह्मभूयाय कल्पते	{सहज-2} संपूर्ण पार करके {सदा सत्वस्थ, एकमात्र ऊर्ध्वमुखी} परंब्रह्म के लिए योग्य है;

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठा अहं अमृतस्य अव्ययस्य च। शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्य ऐकान्तिकस्य च।। 14/27

हि अहं अव्ययस्य ब्रह्मणः च	क्योंकि मैं {शिव+बाबा ही} अविनाशी परम्ब्रह्म की, {यहाँ पु. संगम} और {स्वर्गीय}
अमृतस्य च शाश्वतस्य धर्मस्य च	अमरलोक की तथा {कलियुग में भी} शाश्वत {सत्य सनातन देवी-देवता} धर्म की और
ऐकान्तिकस्य सुखस्य प्रतिष्ठा	{विष्णु के} आत्यन्तिक {अतीन्द्रिय} सुख की, {84 जन्मों वाली समूची सृष्टि में एकमात्र} आबरू हूँ।